अध्याय-6

राज्य सभा के सत्र

राज्य सभा का विघटन नहीं होता[1] जबकि लोक सभा, यदि पहले ही विघटित नहीं कर दी जाती है तो वह अपने प्रथम अधिवेशन के लिए नियत तारीख से पांच वर्ष तक बनी रहती है और पांच वर्ष की उक्त अवधि की समाप्ति का परिणाम लोक सभा का विघटन होता है।[2]

संविधान में यह उपबंध है कि राष्ट्रपति समय-समय पर संसद् के प्रत्येक सदन को ऐसे समय और स्थान पर, जो वह ठीक समझे, अधिवेशन के लिए आहूत करेगा किन्तु उसके एक सत्र की अंतिम बैठक और आगामी सत्र की प्रथम बैठक के लिए नियत तारीख के बीच छह मास का अंतर नहीं होगा।[3] राष्ट्रपति समय-समय पर सदनों का या किसी सदन का सत्रावसान कर सकता है।[4] राज्य सभा का सत्र राष्ट्रपति के आह्वान आदेश में उल्लिखित तारीख और समय पर आरंभ होता है और वह उस दिन समाप्त हो जाता है जब वह सदन का सत्रावसान करता है।

कोई भी सत्र संसद् के अधिवेशन और उसके सत्रावसान के बीच की कालावधि होता है। सत्र के दौरान कोई भी सदन अपनी इच्छानुसार किसी भी तारीख के लिए स्थगित हो सकता है। संसद् के सत्रावसान और नए सत्र में उसके पुनः समवेत होने की अवधि को विश्रांतिकाल (रिसेस)[5] कहा जाता है जबकि किसी सदन के स्थगन और उसकी बैठक के पुनः आरंभ होने के बीच की अवधि को सामान्यतः स्थगन (एडजोर्नमेंट)[6] कहा जाता है।

सामान्यतः 1994 तक राज्य सभा एक वर्ष में चार सत्रों में समवेत होती रही, अर्थात् फरवरी-मार्च और अप्रैल-मई के महीनों में बजट सत्र; जुलाई-अगस्त के महीनों में वर्षाकालीन सत्र और नवम्बर-दिसम्बर के महीनों में शीतकालीन सत्र; किन्तु 1961, 1962, 1964, 1976, 1977, 1980, 1985 और 1991 के वर्षों में प्रत्येक के दौरान राज्य सभा के 5 सत्र हुए[7] और 1975 और 1984 के वर्षों में उसके केवल तीन सत्र हुए।

> प्रारंभिक वर्षों में बजट सत्र के दौरान राज्य सभा में मार्च और अप्रैल के बीच 2-3 सप्ताहों का मध्यावकाश होता था और सत्र को दो सत्रों के बजाय दो भागों में विभक्त कर दिया जाता था। उदाहरण के लिए, 1952 के पहले सत्र, 1953 के तीसरे सत्र और 1954 के छठे सत्र के दो-दो भाग थे।

1994 के एक सौ सत्तरवें सत्र (बजट सत्र) से, बजट सत्र को पूर्व प्रथा के अनुसार दो सत्रों में विभक्त न करके लगातार चलने वाला सत्र माना जा रहा है। ऐसा 1993 में विभाग-संबंधित संसदीय स्थायी समितियों की स्थापना के परिणामस्वरूप हुआ है। समितियों से संबंधित नियम में यह उपबंध किया गया है कि सदनों में बजट पर सामान्य चर्चा की समाप्ति के पश्चात् सदनों को एक निश्चित अवधि के लिए स्थगित किया जाएगा और समितियों को उपरोक्त अवधि के दौरान संबद्ध मंत्रालयों की अनुदान मांगों पर विचार करना होगा।[8] एक सौ सत्तरवां सत्र इस अर्थ में भी अनोखा था कि वह तीन अवधियों में संपन्न हुआ अर्थात्, (1) 21 फरवरी, 1994 से 18 मार्च, 1994 तक, (2) 18 अप्रैल, 1994 से 13 मई, 1994 तक और (3) 13 जून, 1994 से 15 जून, 1994 तक।

राज्य सभा सतत् रूप से विद्यमान रहने वाला निकाय है और उसका विघटन नहीं होता। अत: आरंभ से ही राज्य सभा के सत्रों और बैठकों को भी क्रम-वार और लगातार संख्यांकित किया जाता है।

राष्ट्रपति द्वारा आह्वान

राष्ट्रपति द्वारा बनाए गए भारत सरकार (कार्य का आवंटन) नियमों के अधीन संसद् के दोनों सदनों का आह्वान और सत्रावसान करने की तारीख को नियत करना उन कृत्यों में से एक है जो संसदीय कार्य मंत्रालय को सौंपे गए हैं।[9] सरकारी कार्य को करने और समय-समय पर संसद्-सदस्यों की मांग के अनुसार जनहित के मामलों पर चर्चा के लिए आवश्यक संभावित समय का आकलन करके संसदीय कार्य मंत्रालय संसद् के किसी सत्र को आरंभ करने की तारीख और उसकी संभावित अवधि के संबंध में सिफारिश करने के लिए संसदीय कार्य संबंधी मंत्रि-मंडलीय समिति के समक्ष टिप्पण प्रस्तुत करता है। यदि सिफारिश पर प्रधान मंत्री सहमत हो जाता है तो संसदीय कार्य मंत्रालय सत्र को आरंभ करने की तारीखों को राष्ट्रपति द्वारा स्वीकार किए जाने के लिए सिफारिश को उसके पास भेजता है।[10] इसके पश्चात् संसदीय कार्य मंत्रालय से राज्य सभा सचिवालय को इस आशय की संसूचना प्राप्त होती है कि सरकार ने निर्णय किया है कि राज्य सभा को अमुक तारीख को आहूत किया जाए और सरकारी कार्य की अत्यावश्यकताओं के अधीन रहते हुए सत्र अमुक तारीख को समाप्त हो सकता है और संसदीय कार्य मंत्रालय ने राज्य सभा के सत्र के आरंभ की तारीख के बारे में राष्ट्रपति को सूचित किया है जिसने उसे स्वीकृत कर लिया है। इस संसूचना के आधार पर महासचिव द्वारा हस्ताक्षरित एक टिप्पण एक आह्वान आदेश के साथ, जो राष्ट्रपति के अनुमोदन और हस्ताक्षर के लिए होता है, राष्ट्रपति के सचिव को भेजा जाता है। आह्वान आदेश का रूप निम्नलिखित है:

> संविधान के अनुच्छेद 85 के खण्ड (1) द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए, मैं एतद्द्वारा राज्य सभा को ...(दिन)... (तारीख) को मध्याह्न पूर्व 11.00 बजे नई दिल्ली में समवेत होने के लिए आहूत करता हूं।
> ...20... (राष्ट्रपति)[11]

इसके पश्चात् राष्ट्रपति का आह्वान आदेश राज्य सभा सचिवालय की अधिसूचना द्वारा, जिसमें महासचिव के हस्ताक्षर होते हैं, भारत के असाधारण राजपत्र में प्रकाशित किया जाता है। इस सूचना को समाचार-पत्रों और जन-संचार माध्यमों के द्वारा भी प्रकाशित किया जाता है। भारत सरकार के मंत्रालयों आदि को एक परिपत्र के द्वारा सभा का आह्वान करने के संबंध में राष्ट्रपति के आदेश के बारे में सूचित किया जाता है।

> 1955 में संसदीय कार्य विभाग ने सुझाव दिया कि अनुच्छेद 85 के अधीन संसद् के किसी सदन का आह्वान या सत्रावसान करने संबंधी राष्ट्रपति के आदेश के प्रकाशन की तत्कालीन प्रक्रिया में इस प्रकार से परिवर्तन किया जाना चाहिए:
>
> (1) संसद् का आह्वान या सत्रावसान करने के प्रधान मंत्री या मंत्रि-मंडल के निर्णय को क्रियान्वित करने के लिए अनुच्छेद 85 के अधीन सभी आदेश राष्ट्रपति द्वारा संसदीय कार्य विभाग के माध्यम से किए जाने चाहिए।
>
> (2) ऐसे आदेशों पर राष्ट्रपति के हस्ताक्षर हो जाने और उन्हें संसदीय कार्य विभाग को लौटाये जाने के बाद संसदीय कार्य विभाग को आगे की कार्यवाही के लिए, जहां तक संसद्-सदस्यों का संबंध है, आदेशों के बारे में दोनों सदनों के महासचिवों को तत्काल सूचित करना चाहिए और उन्हें भारत के राजपत्र में प्रकाशित करना चाहिए और उनकी प्रतियों को सूचना के लिए मंत्रालयों आदि को भेजना चाहिये।

यह तर्क दिया गया कि जहां तक संसदीय कार्य विभाग को संसद् और राष्ट्रपति अर्थात् सरकार के बीच संपर्क करने के लिए स्थापित और गठित किया गया है, प्रधान मंत्री या मंत्रि-मंडल की सलाह पर राष्ट्रपति द्वारा की गई

कार्यवाही पर क्या किया जाए, यह देखना उस विभाग का कार्य है। संसद् के सचिव राष्ट्रपति के प्रति प्रत्यक्षत: उत्तरदायी भी नहीं हैं।

किन्तु इस सुझाव को निम्नलिखित कारणों से स्वीकार नहीं किया गया:

(1) अनुच्छेद 85 के अधीन संसद् का आह्वान और सत्रावसान संबंधी आदेश संबंधित सदन के महासचिव राष्ट्रपति के नाम से नहीं करते हैं और न वह उन पर हस्ताक्षर करता है बल्कि ये आदेश स्वयं राष्ट्रपति द्वारा किए जाते हैं और उसके पश्चात् उन्हें संबंधित सदन के महासचिव द्वारा अधिसूचित किया जाता है। अत: अनुच्छेद 77(2) के अधीन इन आदेशों को अधिप्रमाणित करने का प्रश्न ही नहीं उठता;

(2) संसद् के आह्वान या सत्रावसान के बारे में प्रधान मंत्री या मंत्रि-मंडल के निर्णय को प्राप्त करने से संबंधित कार्यपालक कार्यवाही संसदीय कार्य विभाग द्वारा की जाती है और सदन के सचिवालय का कार्य सिर्फ यही है कि वह, प्रधान मंत्री या मंत्रि-मंडल द्वारा जिस आदेश के बारे में सिफारिश की जाती है, उस आदेश के सार भाग को राष्ट्रपति को भेज दे और उसके अनुमोदन और हस्ताक्षर के लिए आदेश का एक प्रारूप भी भेज दे। इसके पश्चात् आदेश को राजपत्र में प्रकाशित किया जाता है। इस प्रक्रिया को सचिवालय द्वारा की गई कोई कार्यपालक कार्यवाही कहना युक्तियुक्त नहीं लगता;

(3) किसी सदन का आह्वान या सत्रावसान संसद् के कार्यकरण से संबंधित है और चूंकि राष्ट्रपति संसद् का घटक है इसलिए सचिवालय द्वारा प्रधान मंत्री या मंत्रि-मंडल के निर्णय के बारे में राष्ट्रपति को सूचित करने में कोई अनौचित्य की बात नहीं है;

(4) यद्यपि राष्ट्रपति अपने मंत्रियों की सलाह पर किसी विधेयक पर अपनी अनुमति देता है तथापि, सदन का सचिव किसी विधेयक को राष्ट्रपति को उसकी अनुमति के लिए भेजता है;

(5) राष्ट्रपति के आदेश को प्रकाशित करने का कार्य समुचित रूप से विधान-मंडल का है, कार्यपालिका का नहीं।[12]

राज्य सभा के आह्वान के लिए राष्ट्रपति के आदेश को जारी करने और उसके आरंभ की तारीख के बीच का समय सत्र को बुलाने के सरकार के निर्णय पर निर्भर है। सामान्यत: यह समय 3 से 10 सप्ताह तक का रहा है। जब बीच का समय बहुत थोड़ा होता है या सत्र को आपात्कालिक रूप से या अल्प सूचना पर बुलाया जाता है तब तार द्वारा सदस्यों को आहूत किया जाता है और उसके बाद प्रेस विज्ञप्ति और शासकीय माध्यमों के द्वारा आह्वान की तारीख को प्रकाशित किया जाता है।[13] सभा को आपात्कालिक रूप से या अल्प सूचना पर आहूत करने के उदाहरण निम्नलिखित हैं:

33वां सत्र (1961)—जब उड़ीसा राष्ट्रपति शासन के अधीन था तब उसके बजट को स्वीकृत करने के लिए; 75वां सत्र (1971)—आम चुनावों के बाद बुलाया गया सत्र; 99वां सत्र (1977)—अनुच्छेद 356(4) के द्वितीय परंतुक के अधीन तमिलनाडु और नागालैण्ड में राष्ट्रपति शासन की अवधि बढ़ाने के लिए; 100वां सत्र (1977)—आम चुनावों के बाद बुलाया गया सत्र और 158वां सत्र (1991)—अनुच्छेद 356(3) के परंतुक के अधीन हरियाणा में राष्ट्रपति शासन के अनुमोदन के लिए।

यदि आह्वान आदेश को जारी करने के पश्चात् सत्र के आरंभ की तारीख में कोई परिवर्तन होता है तो राष्ट्रपति से नया आह्वान आदेश प्राप्त किया जाता है, जैसाकि निम्नलिखित मामलों में हुआ था:

राज्य सभा के चौथे सत्र को मूलत: 17 अगस्त, 1953 को समवेत होने के लिए आहूत करना था। 28 मई, 1953 को राष्ट्रपति द्वारा आह्वान आदेश पर हस्ताक्षर हुए। इस बात को देखते हुए कि राज्य सभा के पास पर्याप्त कार्य नहीं था, सरकार ने सत्र को स्थगित करने और उसे 24 अगस्त, 1953 को बुलाने का निर्णय किया। 5 अगस्त, 1953 को पिछले आदेश का 'अधिक्रमण करते हुए' राष्ट्रपति ने एक नये आह्वान आदेश पर हस्ताक्षर किए। सत्र के आरंभ की तारीख को स्थगित किए जाने के बारे में सदस्यों ने सभा में आपत्ति की। सभा के नेता ने स्थिति स्पष्ट की। सभापति ने अन्य बातों के साथ-साथ यह टिप्पणी की कि यदि संसदीय कार्य को सावधानीपूर्वक आयोजित किया जाता तो स्थगन से बचा जा सकता था और इस टिप्पणी के साथ मामला समाप्त हो गया।[14]

41वें सत्र को मूलत: 21 नवम्बर, 1962 को आरंभ करने का प्रस्ताव था। इस तारीख को बदलकर 8 नवम्बर, 1962 कर दिया गया और इससे पहले के आह्वान आदेश को रद्द कर दिया गया।[15]

51वें सत्र को मूलत: 15 फरवरी, 1965 को आरंभ करने का प्रस्ताव था। तद्नुसार आह्वान आदेश के एक प्रारूप को राष्ट्रपति के समक्ष प्रस्तुत किया गया। किन्तु राष्ट्रपति द्वारा उस पर हस्ताक्षर किए जाने के पूर्व यह निर्णय किया गया कि सत्र 17 फरवरी, 1965 से आरंभ होना चाहिए। अत: राष्ट्रपति सचिवालय ने मूल आह्वान आदेश को राष्ट्रपति के हस्ताक्षर के बिना लौटा दिया। इसके पश्चात् राष्ट्रपति के अनुमोदन और हस्ताक्षर के लिए आह्वान आदेश का संशोधित प्रारूप पुन: भेजा गया।[16]

59वें सत्र को मूलत: 13 मार्च, 1967 को आरंभ होना था। इस तारीख को बदलकर 18 मार्च, 1967 कर दिया गया और पिछले आदेश का 'अधिक्रमण करते हुए' एक नया आह्वान आदेश जारी किया गया।[17]

92वां सत्र मूलत: 28 अप्रैल, 1975 को आरंभ होना था। इस तारीख को बदलकर 25 अप्रैल, 1975 कर दिया गया और पिछले आदेश का 'अधिक्रमण करते हुए' एक नया आह्वान आदेश जारी किया गया।[18]

101वां सत्र मूलत: 23 मई, 1977 को आरंभ होना था। इस तारीख को बदलकर 11 जून, 1977 कर दिया गया और पिछले आदेश का ' अधिक्रमण करते हुए' एक नया आह्वान आदेश जारी किया गया।[19]

तथापि, एक अवसर पर राज्य सभा को 14 जून, 1962 को समवेत होने के लिए आहूत किया गया था, किन्तु 10 जून, 1962 को सरकार ने मुहर्रम के उपलक्ष्य में (जो मूलत: 13 जून, 1962 को पड़ता था) 14 जून, 1962 को सार्वजनिक छुट्टी घोषित कर दी। चूंकि इस स्थिति में सत्र के आरंभ की तारीख को बदलना संभव नहीं था इसलिए सभा निर्धारित तारीख को बैठी और उसके बाद दिनभर के लिए स्थगित हो गई।[20]

यह आवश्यक नहीं है कि दोनों सदनों को एक साथ आहूत किया जाए या दोनों एक ही तारीख को समवेत हों।[21] 1961 तक वर्ष के प्रथम सत्र या लोक सभा के आम चुनाव के बाद हुए पहले सत्र के सिवाय दोनों सदनों ने अलग-अलग तारीखों को अपने सत्र आरंभ किए। राज्य सभा को लोक सभा के सत्र के आरंभ होने के कुछ दिनों के बाद या सामान्यत: एक सप्ताह या कभी-कभी दस दिन या दो सप्ताह के बाद आहूत किया जाता था। यह सम्भवत: लोक सभा द्वारा कुछ विधायी कार्य किए जाने की प्रतीक्षा करने के लिए किया जाता था ताकि बाद में उस पर राज्य सभा विचार कर सके अन्यथा राज्य सभा और लोक सभा के साथ-साथ बैठने पर राज्य सभा के पास कोई काम करने के लिए नहीं होता। उदाहरण के लिए, राज्य सभा का दूसरा सत्र 24 नवम्बर, 1952 को आरंभ हुआ जबकि लोक सभा का सत्र 5 नवम्बर, 1952 को आरंभ हुआ; राज्य सभा का चौथा सत्र 24 अगस्त, 1953 को आरंभ हुआ जबकि लोक सभा का सत्र 3 अगस्त, 1953 को आरंभ हुआ; राज्य सभा का अठारहवां सत्र 12 अगस्त, 1957 को आरंभ हुआ जबकि लोक सभा का सत्र 15 जुलाई, 1957 को आरंभ हुआ। किन्तु 1962 से दोनों सदन सामान्यत: साथ-साथ समवेत होते रहे हैं।

अनुच्छेद 356(4) के दूसरे परंतुक के अधीन तमिलनाडु और नागालैण्ड में राष्ट्रपति शासन की अवधि को बढ़ाने के लिए 28 फरवरी, 1977 और 1 मार्च, 1977 को राज्य सभा का दो दिन का विशेष सत्र (99वां सत्र) आयोजित किया गया। दूसरा दो दिन का विशेष सत्र (158वां सत्र) अनुच्छेद 356(3) के परंतुक के अधीन हरियाणा में राष्ट्रपति शासन के अनुमोदन के लिए 3 जून, 1991 और 4 जून, 1991 को आयोजित किया गया। इन दोनों अवसरों पर लोक सभा के भंग रहने पर भी राज्य सभा की बैठक हुई।

मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा की 20वीं वर्षगांठ के अवसर पर संसदीय कार्य मंत्री द्वारा दिये गये इस सुझाव से सभापति सहमत नहीं हुए कि इस अवसर के उपलक्ष्य में एक विशेष सत्र आयोजित किया जाए। तथापि, मंत्री के सुझाव पर सभापति ने सभा में इस अवसर के बारे में विशेष रूप से एक उल्लेख किया।[22] एक अन्य अवसर पर एक सदस्य द्वारा दिये गये इस सुझाव पर सभा सहमत नहीं हुई कि भारत-चीन युद्ध की स्थिति पर चर्चा करने के लिए एक गुप्त सत्र आयोजित किया जाना चाहिए।[23]

सदस्यों को आहूत किया जाना

महासचिव प्रत्येक सदस्य को आह्वान जारी करता है।[24] सामान्यत: राष्ट्रपति के सचिवालय से राष्ट्रपति के आह्वान आदेश के प्राप्त होने के बाद यथाशीघ्र आह्वान जारी किये जाते हैं। आह्वान एक ओर हिंदी में और दूसरी ओर अंग्रेजी में मुद्रित किये जाते हैं और प्रत्येक सदस्य को उसके नाम से भेजे जाते हैं। आह्वान का रूप इस प्रकार होता है:

''आमंत्रण''

संसद् भवन,
नई दिल्ली
...(तारीख) 20...

श्री/श्रीमती संसद सदस्य,

मुझे आपको यह सूचित करने का निदेश हुआ है कि राष्ट्रपति[25] ने संविधान के अनुच्छेद 85 के खण्ड (1) के द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए राज्य सभा को ...(वार),... (तारीख), 20... को मध्याह्न पूर्व 11.00 बजे, नई दिल्ली में समवेत होने के लिए आमंत्रित किया है।

आपसे अनुरोध है कि आप तद्नुसार राज्य सभा के सत्र में उपस्थित हों।

महासचिव।

1969 तक आह्वानों को निम्नलिखित रूप में जारी किया जाता था:

संविधान के अनुच्छेद 85 के खण्ड (1) द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए राष्ट्रपति द्वारा कृपया यह निदेश दिए जाने पर कि राज्य सभा का सत्र नई दिल्ली में आयोजित किया जाए और इस सत्र को आरंभ करने की तारीख ...19..., ...(वार), मध्याह्न पूर्व... नियत की जाए, आपको... (सदस्य का नाम) एतद्द्वारा उपरोक्त स्थान पर और तारीख को उक्त राज्य सभा में उपस्थित होने के लिए आहूत किया जाता है।

राष्ट्रपति के आदेश से,
सचिव।

15 दिसम्बर, 1969 को हुई राज्य सभा की एक बैठक में एक सदस्य ने सुझाव दिया कि आह्वान के उपरोक्त रूप में परिवर्तन किया जाना चाहिए।[26] 23 दिसम्बर, 1969 को राज्य सभा के सभापति की अध्यक्षता में राज्य सभा में विभिन्न दलों और समूहों के नेताओं की एक बैठक में आह्वान के उपरोक्त रूप के स्थान पर वर्तमान रूप का उपयोग करने का निर्णय किया गया और यह रूप 71वें सत्र (1970) से प्रचलित है।[27]

सदस्यों को जो आह्वान-पत्र भेजे जाते हैं वे उनके दिल्ली के पते और स्थायी पते पर भेजे जाते हैं। ये आह्वान स्थायी पते पर स्पीड पोस्ट द्वारा भेजे जाते हैं। निरुद्ध सदस्य को संबंधित जेल प्राधिकारी की मार्फत आह्वान-पत्र भेजे जाते हैं।

1975 में 93वें और 94वें सत्र के लिए; 1976 में 95वें से 98वें सत्रों के लिए; 1977 में 99वें सत्र के लिए; 1979 में 108वें सत्र के लिए; 1981 में 119वें सत्र के लिए; 1982 में 123वें सत्र के लिए; 1984 में 129वें और 130वें सत्र के लिए; और 1985 में 132वें और 133वें सत्र के लिए संबंधित जेल अधिकारियों की मार्फत निरुद्ध सदस्यों को आह्वान-पत्र भेजे गये। पैरोल पर छोड़े गये एक सदस्य को उसके द्वारा बताये गये पते पर आह्वान-पत्र भेजा गया।[28]

यदि कोई सदस्य सूचित करता है कि उसे आह्वान-पत्र प्राप्त नहीं हुआ है तो उसकी दूसरी प्रति उसे जारी की जाती है।

आह्वान-पत्र के साथ प्रत्येक सदस्य को बैठकों की अस्थायी सारणी की एक मुद्रित प्रति उपलब्ध की जाती है जिसमें यह दर्शाया जाता है कि राज्य सभा किस-किस तारीख को बैठेगी और ऐसी प्रत्येक बैठक में किस प्रकार का कार्य करेगी। किन्तु जब राज्य सभा को 1977 में (99वें सत्र के लिए) और पुन: 1991 में (158वें सत्र के लिए) दो दिन के छोटे से विशेष सत्र के लिए बुलाया गया था तब बैठकों की अस्थायी सारणी जारी नहीं की गई थी। राष्ट्रपति के अभिभाषण, सभा की बैठकों के समय, सत्र के दौरान गैर-सरकारी सदस्यों के कार्य के लिए लॉटरी निकालने की प्रक्रिया और तारीखों, प्रश्नों का उत्तर देने के लिए दिनों के आवंटन और सूचनाओं के देने तथा प्रश्नों के लिए लॉटरी निकाले जाने से संबंधित प्रक्रिया आदि के बारे में संसदीय समाचार के द्वारा भी सदस्यों को विस्तारपूर्वक जानकारी दी जाती है। आह्वान-पत्र के साथ प्रत्येक सदस्य को एक चार्ट भी भेजा जाता है जिसमें प्रश्नों की सूचनाओं की प्राप्ति की पहली और अन्तिम तारीखें दर्शायी जाती हैं।

यदि आह्वान-पत्र के जारी होने के पश्चात् सत्र के आरंभ की तारीख में कोई परिवर्तन होता है तो पिछले आह्वान-पत्र को रद्द करते हुए एक नया आह्वान पत्र जारी किया जाता है और सदस्यों को तार द्वारा तद्नुसार सूचना भी दी जाती है।

यदि सभा अनियत तारीख के लिए स्थगित कर दी जाती है और उसके सत्रावसान के पूर्व उसे पुन: समवेत किया जाता है तो सत्र के पुन: समवेत होने वाले भाग को उसका दूसरा भाग माना जाता है और नये आह्वान-पत्र जारी नहीं किए जाते और सदस्यों को सभा के पुन: समवेत होने के बारे में पत्र/तार द्वारा सूचना दी जाती है।

> 151वां सत्र, जो 18 जुलाई, 1989 को आरंभ हुआ था, 18 अगस्त, 1989 को अनियत तारीख के लिए स्थगित किया गया था। राज्य सभा का सत्रावसान नहीं किया गया था। संसदीय कार्य मंत्री से एक प्रस्ताव प्राप्त होने पर सभापति ने 11 अक्तूबर, 1989 को सभा की बैठक पुन: बुलाई। 18 अगस्त, 1989 को राज्य सभा के अनियत तारीख तक स्थगित होने की अवधि से पूर्व और पश्चात् के दो भागों को एक ही सत्र माना गया जिसके दो भाग थे अर्थात् भाग-1 और भाग-2। सत्र के भाग-2 की समाप्ति पर राज्य सभा 13 अक्तूबर, 1989 को अनियत तारीख के लिए स्थगित की गई और 20 अक्तूबर, 1989 को राष्ट्रपति द्वारा उसका सत्रावसान किया गया।[29]
>
> 153वां सत्र 12 मार्च, 1990 को आरंभ हुआ। उसे 30 मार्च, 1990 को अनियत तारीख के लिए स्थगित किया गया। इसका सत्रावसान नहीं किया गया। संसदीय कार्य मंत्री से एक प्रस्ताव प्राप्त होने पर सभापति ने 9 अप्रैल, 1990 को सभा की बैठक पुन: बुलाई। 30 मार्च, 1990 को अनियत तारीख के लिए स्थगन के पूर्व और पश्चात् के दो भागों को एक सत्र माना गया जो दो भागों अर्थात् भाग-1 और भाग-2 में विभक्त था। 10 अप्रैल, 1990 को भाग-2 की समाप्ति पर राज्य सभा को उसी दिन अनियत तारीख के लिए स्थगित किया गया और 12 अप्रैल, 1990 को राष्ट्रपति द्वारा उसका सत्रावसान किया गया।[30]
>
> 155वां सत्र 7 अगस्त, 1990 को आरंभ हुआ। 7 सितम्बर, 1990 को उसे अनियत तारीख के लिए स्थगित किया गया। सभा का सत्रावसान नहीं किया गया। संसदीय कार्य मंत्री से एक प्रस्ताव प्राप्त होने पर सभापति ने 1 अक्तूबर, 1990 को सभा की बैठक पुन: बुलाई। 7 सितम्बर, 1990 को अनियत तारीख तक स्थगित किये जाने की अवधि के पूर्व और पश्चात् के दो भागों को एक सत्र माना गया जो दो भागों अर्थात् भाग-1 और भाग-2 में विभक्त था। 5 अक्तूबर, 1990 को भाग-2 की समाप्ति पर राज्य सभा को उसी दिन अनियत तारीख के लिए स्थगित किया गया और 11 अक्तूबर, 1990 को राष्ट्रपति द्वारा उसका सत्रावसान किया गया।[31]

200वां सत्र 2 दिसम्बर, 2003 को आरंभ हुआ। उसे 23 दिसम्बर, 2003 को अनियत तारीख के लिए स्थगित किया गया। सभा का सत्रावसान नहीं किया गया। संसदीय कार्य मंत्री से एक प्रस्ताव प्राप्त होने पर सभापति ने 30 जनवरी, 2004 को सभा की बैठक पुन: बुलाई। 23 दिसम्बर, 2003 को अनियत तारीख तक स्थगित किये जाने की अवधि के पूर्व और पश्चात् के दो भागों को एक सत्र माना गया जो दो भागों अर्थात् भाग-1 और भाग-2 में विभक्त था। तदुपरांत, जब 30 जनवरी, 2004 को सभा 200वें सत्र के भाग-2 के लिए पुन: समवेत हुई तो उसे वर्ष का पहला सत्र नहीं माना गया और इसलिए राष्ट्रपति के अभिभाषण से आरंभ नहीं हुआ। 5 फरवरी, 2004 को सत्र के भाग-2 की समाप्ति पर सभा को उसी दिन अनियत तारीख के लिए स्थगित किया गया और 10 फरवरी, 2004 को राष्ट्रपति द्वारा उसका सत्रावसान किया गया।[31क]

नव-निर्वाचित/नामनिर्देशित सदस्यों को सरकारी राजपत्र में उनके निर्वाचन/नामनिर्देशन की अधिसूचना के बाद ही आह्वान-पत्र जारी किए जाते हैं जैसाकि लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 के अधीन आवश्यक है।[32]

यदि कोई व्यक्ति सत्र के चालू रहने के दौरान सदस्य बन जाता है तो उसे आह्वान-पत्र जारी नहीं किए जाते किन्तु उसे सत्र के आरंभ की तारीख के बारे में और उसकी समाप्ति की सम्भावित तारीख के बारे में सूचित किया जाता है।

21 फरवरी, 1994 को राज्य सभा का जो 170वां सत्र आरंभ हुआ था वह 18 अप्रैल, 1994 को पुन: समवेत होने के लिए 18 मार्च, 1994 को स्थगित किया गया। जनवरी और मार्च, 1994 के बीच हुए द्विवार्षिक चुनावों के परिणामस्वरूप राज्य सभा के लिए 58 सदस्य निर्वाचित हुए और उनका कार्यकाल 3 अप्रैल, 1994 को आरंभ हुआ। अत: इनमें से प्रत्येक सदस्य को महासचिव के हस्ताक्षर से एक पत्र भेजा गया जिसमें सत्र के पुन: समवेत होने की तारीख की सूचना दी गई थी। पत्र के साथ इस सत्र के लिए बैठकों की अस्थायी सारणी की एक प्रति भी प्रत्येक सदस्य को भेजी गई।[33]

इसी प्रकार, राज्य सभा का 189वां सत्र, जो 23 फरवरी, 2000 को आरंभ हुआ था, 17 मई, 2000 को पुन: समवेत होने के लिए 16 मार्च, 2000 को स्थगित हुआ। द्विवार्षिक चुनावों के परिणामस्वरूप राज्य सभा के लिए 58 सदस्य निर्वाचित हुए और 52 सदस्यों के लिए कार्यकाल 3 अप्रैल, 2000 को और 6 सदस्यों के लिए 4 अप्रैल, 2000 को आरंभ हुआ। इन सदस्यों को महासचिव के हस्ताक्षर से एक पत्र भेजा गया जिसमें सत्र के पुन: समवेत होने की तारीख की सूचना दी गई। पूर्व प्रथा के अनुसार सत्र के लिए बैठकों की अस्थायी सारणी की एक प्रति भी भेजी गई।[34]

25 फरवरी, 2002 को राज्य सभा का जो 195वां सत्र आरंभ हुआ था, 22 मार्च, 2002 को स्थगित किया गया और 15 अप्रैल, 2002 को पुन: समवेत हुआ। द्विवार्षिक चुनावों के परिणामस्वरूप राज्य सभा के लिए 58 सदस्य निर्वाचित हुए और 22 सदस्यों के लिए कार्यकाल 3 अप्रैल, 2002 को तथा 36 सदस्यों के लिए 10 अप्रैल, 2002 को आरंभ हुआ। इन सदस्यों को महासचिव के हस्ताक्षर से एक पत्र भेजा गया जिसमें सत्र के पुन: समवेत होने की तारीख की सूचना दी गई थी और सत्र की बैठकों की अस्थायी सारणी की एक प्रति भी भेजी गई।[34क]

ऐसे सदस्य को भी आह्वान-पत्र जारी किए जाते हैं जो किसी राज्य के विधान-मंडल के लिए निर्वाचित हो जाता है, किन्तु जिसने राज्य सभा की सदस्यता से त्याग-पत्र नहीं दिया है या राज्य विधान-मंडल के लिए उसके निर्वाचन की तारीख से चौदह दिन की अवधि समाप्त नहीं हुई है। इसी कारण से आह्वान-पत्र ऐसे सदस्य को भी जारी किए जाते हैं जो किसी राज्य में मंत्री बन जाता है जब तक वह राज्य सभा का सदस्य बना रहता है।

उड़ीसा विधान सभा के लिए राज्य सभा के दो सदस्य निर्वाचित हुए। समसामयिक सदस्यता प्रतिषेध नियम, 1950 के नियम 2 के साथ पठित अनुच्छेद 101(2) को देखते हुए उन्हें 75वें सत्र (1971) के लिए आह्वान -पत्र जारी किए गए।[35]

उस स्थिति में जब सदस्य सत्र के आरंभ के पूर्व किन्तु आह्वान-पत्र जारी होने के पश्चात् निर्वाचित/नामनिर्देशित होते हैं तब उस सत्र के लिए उन्हें आह्वान-पत्र तभी जारी किए जाते हैं जब उनके निर्वाचन/नामनिर्देशन के बारे में सूचना प्राप्त हो जाए और ऐसे मामले में आह्वान-पत्र जारी करने की मूल तारीख तो वही रहती है किन्तु उसके नीचे आह्वान-पत्र के जारी करने की नई तारीख का भी उल्लेख किया जाता है। बहुत शीघ्र होने वाले द्विवार्षिक चुनावों के मामले में उन सदस्यों को आह्वान-पत्र जारी नहीं किए जाते जो निवृत्त होने वाले हैं। इस सम्बन्ध में अपनाई जाने वाली प्रथा निम्नलिखित मामलों से स्पष्ट होती है:

1954 में, जब एक तिहाई सदस्य निवृत्त हो गये थे, नव-निर्वाचित/नामनिर्देशित सदस्यों को आह्वान-पत्र जारी नहीं किए गये क्योंकि राष्ट्रपति द्वारा छठे सत्र का अवसान नहीं किया गया था बल्कि उसे बाद की तारीख में समवेत करने के लिये स्थगित कर दिया गया था। किन्तु सदस्यों के रूप में उन्हें सभा की बैठकों में उपस्थित होने का अनुरोध करने वाले पत्र भेजे गये थे।[36]

निम्नलिखित सत्रों के लिये आह्वान-पत्र केवल निवृत्त न होने वाले सदस्यों को जारी किये गये और नव-निर्वाचित/नामनिर्देशित सदस्यों को द्विवार्षिक चुनाव के पूरा होने के बाद आह्वान-पत्र जारी किये गये और उनमें विद्यमान तारीख के साथ जारी करने की नई तारीख का भी उसके नीचे उल्लेख किया गया: (i) 21वां सत्र (1958); (ii) 29वां सत्र (1960) (चूंकि 3 अप्रैल को हुये निर्वाचनों और 6 अप्रैल को सत्र के प्रारंभ होने के बीच का समय बहुत कम था इसलिए एक्सप्रेस तार द्वारा आह्वान-पत्र जारी किये गये);[37] (iii) 88वां सत्र (1974); (iv) 105वां सत्र (1978); (v) 107वां सत्र (1978); (vi) 109वां सत्र (1979); (vii) 134वां सत्र (1985); (viii) 135वां सत्र (1985); (ix) 138वां सत्र (1986); और (x) 139वां सत्र (1986)।

13 नवम्बर, 1972 को आरंभ होने वाले 82वें सत्र (1972) के लिये 16 सितम्बर, 1972 को आह्वान-पत्र जारी किये गये। बाद में इस बात पर ध्यान गया कि जम्मू-कश्मीर से एक सदस्य का कार्यकाल 10 नवम्बर, 1972 को समाप्त होना था। उनसे निवेदन किया गया कि उन्हें जो आह्वान-पत्र जारी किया गया था उसे वह रद्द मानें।[38]

106वें सत्र (1978) के लिये एक ऐसे सदस्य को आह्वान-पत्र जारी नहीं किया गया जिसका कार्यकाल सत्र के एक दिन पूर्व समाप्त होना था। इस सदस्य के स्थान पर निर्वाचित हुये सदस्य को भी आह्वान-पत्र जारी नहीं किया गया क्योंकि उस सदस्य की पदावधि सत्र के आरंभ होने के दिन से आरंभ हुई थी। उस सदस्य को सत्र के बारे में तार से सूचित किया गया।[39]

7 जुलाई, 1979 को बिहार से राज्य सभा के लिये होने वाली दो आकस्मिक रिक्तियों को भरने के लिये चुनाव हुये। बिहार विधान सभा के सचिव से यह अनुरोध किया गया कि वे निर्वाचित सदस्यों को 9 जुलाई, 1979 को 110वें सत्र के आरंभ होने के बारे में सूचना दें।[40]

13 अगस्त, 1981 को निवृत्त होने वाले गुजरात के तीन सदस्यों को आह्वान-पत्र जारी नहीं किये गये क्योंकि 119वां सत्र 17 अगस्त, 1981 को आरंभ होना था। किन्तु 14 अगस्त, 1981 को उनके स्थान पर निर्वाचित सदस्यों को उस दिन उनके निर्वाचन की अधिसूचना के जारी होने पर आह्वान पत्र जारी किए गये।[41]

24 जुलाई, 1983 को निवृत्त होने वाले तमिलनाडु के छह सदस्यों को आह्वान-पत्र जारी नहीं किये गये क्योंकि 127वां सत्र अगले दिन आरंभ होने वाला था। पांडिचेरी का एक सदस्य 27 जुलाई, 1983 को निवृत्त होने वाला था इसलिये उसे आह्वान-पत्र जारी किया गया।[42]

153वें सत्र (द्वितीय भाग) के दौरान 30 मार्च, 1990 को राज्य सभा के अनियत दिन तक के लिए स्थगित होने के पश्चात् 9 और 10 अप्रैल, 1990 को दो दिन के लिए उसकी बैठक पुन: बुलाई गई। 2 अप्रैल को चौंतीस सदस्य निवृत्त हो गये थे और 9 अप्रैल को अन्य अड़तीस सदस्य निवृत्त होने वाले थे। चूंकि यह कोई नया सत्र नहीं था इसलिए सत्र के दूसरे भाग में सदस्यों को उपस्थित होने के लिए तीन प्रकार के पत्र/तार भेजे गए जो निम्नलिखित रूप में थे:

(i) निवृत्त न होने वाले सदस्यों और 2 अप्रैल को निर्वाचित सदस्यों से अनुरोध किया गया कि वे 9 और 10 अप्रैल की बैठकों में उपस्थित हों;

(ii) 9 अप्रैल को निवृत्त होने वाले सदस्यों से अनुरोध किया गया कि वे केवल उसी दिन की बैठक में उपस्थित हों;

(iii) उपरोक्त (ii) में उल्लिखित निवृत्त होने वाले सदस्यों के स्थान पर निर्वाचित हुए सदस्यों से अनुरोध किया गया कि वे केवल 10 अप्रैल की सभा की बैठक में उपस्थित हों।[43]

162वां सत्र 31 मार्च, 1992 को स्थगित होना था। किन्तु उसकी अवधि को 3 अप्रैल, 1992 तक बढ़ा दिया गया। द्विवार्षिक चुनाव में निर्वाचित हुए 18 सदस्यों को सत्र की अवधि को बढ़ाये जाने के बारे में तार द्वार सूचित किया गया।[44]

यदि कोई सदस्य उसे सत्र में उपस्थित होने का आह्वान-पत्र जारी होने के बाद सदस्य होने के लिए निरर्हित (अयोग्य) हो जाता है तो उससे निवेदन किया जाता है कि वह आह्वान-पत्र को रद्द माने।

8 सितम्बर, 1982 को भारत के राष्ट्रपति ने निर्णय किया कि विद्यमान सदस्य श्री आर० मोहनरंगम् संविधान के अनुच्छेद 102(1) (क) के अधीन निरर्हित हो गये हैं। उनसे अनुरोध किया गया कि 124वें सत्र के संबंध में जो आह्वान-पत्र उन्हें जारी किया गया है उसे वे रद्द समझें।[45]

ऐसे सदस्य को भी आह्वान-पत्र जारी नहीं किए जाते जिसका राज्य सभा के लिए निर्वाचन न्यायालय द्वारा अमान्य घोषित कर दिया गया हो। जहां तक किसी सदस्य के निर्वाचन को रद्द करने वाले न्यायालय के निर्णय पर न्यायालय के रोक आदेश का संबंध है, इस प्रश्न का निर्णय कि क्या ऐसे सदस्य को आह्वान-पत्र जारी किया जाए या नहीं, रोक आदेश की शर्तों के आधार पर किया जाता है। निम्नलिखित मामले इस संबंध में अपनाई जाने वाली प्रथा को दर्शाते हैं:

उच्चतम न्यायालय ने 21 मई, 1957 के अपने आदेश के द्वारा यह निर्देश दिया कि राज्य सभा के सदस्य मौलाना अब्दुल शकूर ''सिवाय उस सीमा के राज्य सभा के सदस्य के रूप में कार्य नहीं करेंगे जहां तक निरन्तर अनुपस्थित रहने के कारण अपनी सदस्यता को खो देने से बचने के प्रयोजन के लिए ही उक्त राज्य सभा के सत्र में उपस्थित रहना उनके लिए नितांत आवश्यक हो''। अत: न्यायालय के आदेश के लम्बित रहने तक निरंतर अनुपस्थित होने के कारण अपनी सदस्यता को खो देने से बचने के प्रयोजन के लिए ही वे सभा में उपस्थित हो सकते थे। चूंकि उस सत्र की (अर्थात् 18वें सत्र की) समूची अवधि के दौरान सदस्य की अनुपस्थिति संविधान के अनुच्छेद 101(4) के अधीन 60 दिनों से अधिक नहीं थी इसलिए यह निर्णय किया गया कि सदस्य को सत्र में उपस्थित होने के लिए औपचारिक रूप से आह्वान-पत्र जारी करना उच्चतम न्यायालय के आदेश के अनुरूप नहीं होगा। दूसरी ओर आह्वान-पत्र के बिना भी सदस्य सत्र में उपस्थित रह सकते थे। अत: उस सत्र के लिए उन्हें कोई आह्वान-पत्र जारी नहीं किया गया।[46]

पटना के निर्वाचन अधिकरण ने राज्य सभा के लिए श्री आर०पी० जैन का निर्वाचन अमान्य घोषित कर दिया। अत: उन्हें 53वें सत्र के लिए तारीख 3 जून, 1965 के आह्वान-पत्र जारी नहीं किए गए। बाद में पटना उच्च न्यायालय ने 30 जून, 1965 को अधिकरण के आदेश के कार्यान्वयन पर रोक लगा दी। इसके पश्चात् सदस्य को आह्वान-पत्र जारी किए गए ''ताकि निर्वाचन अधिकरण को आदेश प्राप्त होने पर उन्हें सदस्यता के जिन अधिकारों से वंचित कर दिया गया था वे उन्हें पुन: प्राप्त हो सकें''।[47]

डा० एम० चेन्ना रेड्डी मार्च, 1967 में हुए आम चुनावों में आंध्र प्रदेश विधान सभा के लिए चुने गए थे। 3 अप्रैल, 1968 को राज्य सभा का सदस्य बनने से पहले उन्होंने विधान सभा में अपनी सदस्यता से त्याग-पत्र दे दिया था। आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय ने 26 अप्रैल, 1968 को दिये गये एक निर्णय द्वारा विधान सभा के लिये उनका निर्वाचन रद्द कर दिया। उच्चतम न्यायालय ने 4 जून, 1968 के अपने आदेश के द्वारा उच्च न्यायालय के निर्णय के कार्यान्वयन पर रोक लगा दी और यह आदेश दिया कि:

(क) डा० चेन्ना रेड्डी को राज्य सभा की सदस्यता की शपथ लेने की अनुमति दी जाए;

(ख) उन्हें निरर्हता से बचने के लिए कम से कम जितने दिनों तक उपस्थित रहना पड़ेगा उतने दिनों तक उन्हें राज्य सभा में उपस्थित होने का हक होगा;

(ग) उन्हें सभा की कार्यवाही में भाग नहीं लेना चाहिए और उन्हें न तो मतदान करने और न ही कोई वेतन या भत्ते लेने का अधिकार होगा।

उपरोक्त को देखते हुए 22 जुलाई, 1968 को आरंभ होने वाले 65वें सत्र के लिए डा॰ रेड्डी को तारीख 22 मई, 1968 का आह्वान-पत्र जारी नहीं किया गया, किन्तु उन्हें राज्य सभा संसदीय समाचार और बैठकों की सारणी ही भेजी गई।[48]

मद्रास उच्च न्यायालय ने तारीख 14 अक्तूबर, 1974 के अपने आदेश के द्वारा मार्च, 1974 में द्विवार्षिक चुनावों में निर्वाचित किए गए श्री जॉन उर्फ वालमपुरी जॉन के निर्वाचन को रद्द कर दिया। उच्चतम न्यायालय ने 10 जनवरी, 1975 को इस शर्त पर एकपक्षीय रोक आदेश दिया कि श्री जॉन अपने स्थान को बचाए रखने के लिए, कम से कम जितने दिनों तक उपस्थित रहना आवश्यक हो उतने दिनों तक, राज्य सभा के सत्रों में उपस्थित रहने और उपस्थिति रजिस्टर में हस्ताक्षर करने के हकदार होंगे, किन्तु वे कार्यवाही में और मतदान में भाग नहीं लेंगे और उन्हें कोई पारिश्रमिक लेने का हक नहीं होगा। तथापि, उच्चतम न्यायालय में उनकी अपील का निपटारा होने तक 94वें (1975) और 99वें सत्र (1977) के लिए उन्हें आह्वान-पत्र जारी किए गए।[49]

इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने 10 जुलाई, 1981 को राज्य सभा के लिए श्री पशुपति नाथ सुकुल का निर्वाचन अमान्य घोषित कर दिया। तथापि, न्यायालय ने निम्नलिखित शर्तों के अधीन तीन सप्ताह तक अर्थात् 4 अगस्त, 1981 तक रोक आदेश की मंजूरी दी:

(1) वे उन समितियों की बैठक में भाग ले सकेंगे जिनके वे सदस्य बनाए गए थे या जिनके लिए वे राज्य सभा के सदस्य की हैसियत से निर्वाचित किए गए थे किन्तु उन्हें राज्य सभा में मतदान करने या वाद-विवाद में भाग लेने का हक नहीं होगा;

(2) उन्हें राज्य सभा के किसी सदस्य को दिए जाने वाले वेतन या भत्तों को प्राप्त करने का हक नहीं होगा किन्तु उन्हें जो मकान आवंटित किया गया है उसमें वे रह सकते हैं।

17 अगस्त, 1981 को आरंभ होने वाले 119वें सत्र के लिए शुरू में उन्हें आह्वान-पत्र जारी नहीं किए गए क्योंकि यह अनुभव किया गया कि रोक आदेश द्वारा श्री सुकुल की राज्य सभा की समिति की सदस्यता ही बची थी। इस बीच श्री सुकुल ने उच्चतम न्यायालय से एकपक्षीय रोक आदेश के लिए निवेदन किया जिसकी 30 जुलाई, 1981 को मंजूरी दे दी गई। अत: उन्हें 3 अगस्त, 1981 को आह्वान-पत्र जारी किया गया। उच्चतम न्यायालय द्वारा 12 अक्तूबर, 1981 को रोक आदेश की पुष्टि कर दी गई।[50]

गुवाहाटी उच्च न्यायालय ने तारीख 7 नवम्बर, 1990 के अपने आदेश के द्वारा असम से राज्य सभा के लिए श्री अमृतलाल बसुमतारी के निर्वाचन को रद्द कर दिया और उनके स्थान पर श्री हितेश्वर सैकिया को निर्वाचित घोषित किया। 27 दिसम्बर, 1990 से आरंभ होने वाले 156वें सत्र के लिए दोनों को आह्वान-पत्र जारी नहीं किए गए। श्री बसुमतारी की अपील पर उच्चतम न्यायालय ने 6 दिसम्बर, 1990 के आदेश द्वारा उच्च न्यायालय के आदेश के कार्यान्वयन पर रोक लगाकर उन्हें राज्य सभा में उपस्थित होने और रजिस्टर पर हस्ताक्षर करने की अनुमति दी किंतु आदेश दिया कि वे कार्यवाही में भाग लेने, मतदान के अपने अधिकार का प्रयोग करने और कोई पारिश्रमिक लेने के हकदार नहीं होंगे। रोक आदेश के पश्चात् 156वें, 157वें और 158वें सत्र के लिए आह्वान-पत्र जारी किए गए। बाद में उच्चतम न्यायालय ने तारीख 1 अगस्त, 1991 के अपने आदेश द्वारा श्री बसुमतारी की अपील को खारिज कर दिया। चूंकि उच्चतम न्यायालय में श्री बसुमतारी की अपील के निर्णयाधीन रहने के दौरान श्री हितेश्वर सैकिया असम के मुख्य मंत्री बन गए थे और उच्चतम न्यायालय में उनकी ओर से इस आशय का अभ्यावेदन दे दिया गया था कि वे राज्य सभा का सदस्य बनने में रुचि नहीं रखते, अत: न्यायालय ने उस तारीख से उनके स्थान को रिक्त घोषित कर दिया।[51]

निर्वाचन आयोग ने 8 जुलाई, 1991 के आदेश के द्वारा, जो लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 10क के अधीन जारी किया गया था, श्री डब्ल्यू॰ कुलबिधु सिंह को संसद/राज्य विधान-मंडल का सदस्य होने के अयोग्य घोषित कर दिया। अत: 160वें सत्र के लिए उन्हें आह्वान-पत्र तथा अन्य पत्र नहीं भेजे गए। उन्होंने दिल्ली उच्च न्यायालय में याचिका दायर की जिसने निर्वाचन आयोग को कारण बताओ नोटिस जारी किया किंतु आदेश के कार्यान्वयन पर रोक नहीं लगाई। 161वें सत्र के लिए भी उन्हें आह्वान-पत्र जारी नहीं किया गया। बाद में दिल्ली उच्च न्यायालय ने 18 नवम्बर, 1991 को निर्वाचन आयोग के आदेश के कार्यान्वयन पर रोक लगा दी। अत: सदस्य को आह्वान-पत्र जारी करना पुन: शुरू कर दिया गया।[52]

सत्र की अवधि का बढ़ाया जाना

किसी सत्र के आरंभ के पश्चात् बैठकों की अस्थायी सारणी में सदस्यों को अधिसूचित की गई निर्धारित समय-सीमा के बाद भी सभा की बैठकें करनी पड़ सकती हैं। सामान्यत: ऐसा सरकारी कार्य के निष्पादन के लिए किया जाता है और इस मामले पर कार्य मंत्रणा समिति में विचार किया जाता है और सभापीठ द्वारा उसकी सिफारिश की सभा में घोषणा की जाती है। साथ ही सदस्यों को इसके बारे में संसदीय समाचार द्वारा सूचित किया जाता है। भारत सरकार के मंत्रालयों आदि को भी इस संबंध में अलग परिपत्र द्वारा सूचित किया जाता है।

ऐसे कई अवसर आए हैं जब सत्र की अवधि एक दिन, दो दिन या उससे भी अधिक बढ़ाई गई है। सामान्यत: सभापीठ द्वारा अवधि बढ़ाए जाने की घोषणा की जाती है किंतु कभी-कभी सभा का नेता या संसदीय कार्य मंत्री भी ऐसी घोषणा कर सकता है।

अनियत तिथि के लिए स्थगन

किसी सत्र के दौरान राज्य सभा एक दिन या एक दिन से अधिक के लिए स्थगित हो सकती है। उसे अनियत तिथि के लिए भी स्थगित किया जा सकता है। सभा को स्थगित करने का अर्थ अगले दिन या किसी बाद के दिन या समय तक सभा की बैठक को निलम्बित रखना है। अनियत तिथि के लिए स्थगन का अर्थ सभा की अगली बैठक की निश्चित तारीख विनिर्दिष्ट या निर्धारित किए बिना सभा की बैठक को समाप्त करना है।

समय-समय पर या अनियत तिथि के लिए सभा को स्थगित करने की शक्ति पीठासीन अधिकारी में निहित है। वह सभा की राय लेकर किसी निश्चित समय पर या ऐसे किसी अन्य समय पर, जो वह निर्धारित करे, ऐसा कर सकता है। सभापति, यदि वह उचित समझे, सभा के स्थगित होने की तारीख या समय से पहले या सभा के अनियत तिथि के लिए स्थगित होने के बाद किसी भी समय किन्तु राष्ट्रपति द्वारा उसका सत्रावसान करने के पहले सभा की बैठक बुला सकता है।

> 3 दिसम्बर, 1971 को राज्य सभा सोमवार, 6 दिसम्बर, 1971 के लिए स्थगित कर दी गई थी। इसी बीच पाकिस्तान के साथ युद्ध छिड़ गया। सभापति ने निदेश दिया कि राज्य सभा शनिवार, 4 दिसम्बर को बैठेगी और तद्नुसार सभा की बैठक हुई। शुक्रवार, 3 दिसम्बर को ही इस आशय का राज्य सभा संसदीय समाचार भाग-2 सदस्यों को जारी किया गया और 4 दिसम्बर, 1971 के राज्य सभा संसदीय समाचार भाग-1 में कार्यवाही के अभिलेख के पहले निम्नलिखित टिप्पण दिया गया था:
>
> > सभापति द्वारा यह निदेश दिए जाने पर कि राज्य सभा, जो सोमवार, 6 दिसम्बर, 1971 तक के लिए स्थगित की गई थी, शनिवार, 4 दिसम्बर, 1971 को मध्याह्न पूर्व 11 बजे समवेत होगी, राज्य सभा मध्याह्न पूर्व 11 बजे समवेत हुई।

निर्धारित समय से पूर्व अनियत तिथि के लिए स्थगन

> बैठकों की अस्थाई सारणी के अनुसार 36वां सत्र 22 दिसम्बर, 1961 को समाप्त होना था। 4 दिसम्बर, 1961 को उपसभापति ने घोषणा की कि राज्य सभा 15 दिसम्बर, 1961 को अनियत तिथि के लिए स्थगित होगी और तद्नुसार 18, 19, 20, 21 और 22 दिसम्बर, 1961 के लिए सभा की जो बैठकें निर्धारित की गई थीं वे रद्द कर दी गई हैं। तद्नुसार 15 दिसम्बर, 1961 को राज्य सभा अनियत तिथि के लिए स्थगित हो गई।
>
> संसदीय कार्य मंत्री ने 16 जून, 1962 को 39वें सत्र के शेष भाग के लिए सरकारी कार्य की घोषणा की और

जिस अन्तिम मद का उल्लेख किया गया था वह 26 जून, 1962 के लिए थी। 19 जून, 1962 को सभापति ने घोषणा की कि संसदीय कार्य मंत्री द्वारा घोषित कार्यक्रम के अनुसार सत्र 26 जून, 1962 को समाप्त होगा। हालांकि सत्र 29 जून, 1962 को समाप्त होना था। तद्नुसार सभा 26 जून, 1962 को अनियत तिथि के लिए स्थगित कर दी गई।

16 जुलाई, 1979 को सभा की बैठक के आरंभ में विपक्ष के नेता (श्री कमलापति त्रिपाठी) ने कहा कि प्रधान मंत्री ने इस्तीफा दे दिया है। यह मांग की गई कि सभा स्थगित कर दी जाए। सभापति ने ''मामले में राष्ट्रपति की संसूचना को देखते हुए'' सभा को अनियत तिथि के लिए स्थगित कर दिया।

20 अगस्त, 1979 को सभा के नेता (श्री कृष्ण चंद्र पंत) ने सभा को सूचित किया कि सरकार ने इस्तीफा दे दिया है और सभा के सामने कोई कार्य नहीं है और इसलिए उसे अनियत तिथि के लिए स्थगित किया जा सकता है। सभापति ने प्रधान मंत्री द्वारा लिखे गए निम्नलिखित पत्र को पढ़कर सुनाया:

> प्रिय सभापति महोदय,
>
> मैंने राष्ट्रपति को अपना तथा अपनी मंत्रि-परिषद् का त्याग-पत्र दे दिया है इसके परिणामस्वरूप मेरा निवेदन है कि आज के लिए निर्धारित कार्य को हाथ में न लिया जाए।

सभापति ने पूछा कि क्या वे सभा को स्थगित कर सकते हैं। कुछ सदस्यों द्वारा ''हां'' कहने पर उन्होंने सभा को अनियत तिथि के लिए स्थगित कर दिया।

151वें सत्र के दूसरे भाग की बैठक 11 अक्तूबर, 1989 को बुलाई गई। मूलत: उसे 16 अक्तूबर, 1989 को समाप्त होना था। इस भाग में मुख्यत: पंचायती राज और नगरपालिकाओं के संबंध में संविधान (चौंसठवां संशोधन) विधेयक, 1989 और संविधान (पैंसठवां संशोधन) विधेयक, 1989 पर विचार होना था। सरकार ने 13 अक्तूबर, 1989 को ही विधेयकों को हाथ में लेने का निर्णय किया। संविधान के अनुच्छेद 368 के अधीन विधेयकों के लिए सभा में अपेक्षित बहुमत प्राप्त नहीं हो सका। मतदान के परिणाम की घोषणा करने के पश्चात् सभापति ने सभा को अनियत तिथि के लिए स्थगित कर दिया।

157वां सत्र 27 मार्च, 1991 को समाप्त होना था। 6 मार्च, 1991 को जब मध्याह्न-भोजन के अवकाश के बाद सभा पुन: समवेत हुई तब सभा के नेता (श्री यशवन्त सिन्हा) ने घोषणा की कि प्रधान मंत्री अपना तथा अपनी मंत्रि-परिषद् का त्याग-पत्र देने के लिए राष्ट्रपति भवन पहुंचने ही वाले हैं और उन्होंने सभापीठ से निवेदन किया कि वे उस दिन की बैठक को स्थगित कर दें। अगले दिन महासचिव ने प्रधान मंत्री द्वारा राष्ट्रपति को दिए गए त्याग-पत्र और राष्ट्रपति द्वारा प्रधान मंत्री का त्याग-पत्र स्वीकार करते हुए उन्हें (प्रधान मंत्री को) लिखे गए पत्र की एक-एक प्रति सभा पटल पर रखी। इसके बाद सभा 11 मार्च, 1991 तक के लिए स्थगित कर दी गई। अगले दो दिनों अर्थात् 12 मार्च, 1991 और 13 मार्च, 1991 में सभा ने संविधान पचहत्तरवां संशोधन विधेयक, 1991 (जो पंजाब में राष्ट्रपति शासन की अवधि बढ़ाने के लिए था) सहित अत्यंत आवश्यक विधायी और अन्य कार्य पर विचार किया और उसे निपटाया। उपसभापति के विदाई भाषण के बाद सभा 13 मार्च, 1991 को अनियत तिथि के लिए स्थगित कर दी गई।

7 दिसम्बर, 1994 को आरंभ हुए 172वें सत्र को बैठकों की अस्थाई सारणी के अनुसार 23 दिसम्बर, 1994 को समाप्त हो जाना था। सत्र के अन्तिम दिन ज्ञान प्रकाश समिति के प्रतिवेदन से उठने वाले मुद्दों पर सभा में गंभीर अव्यवस्था उत्पन्न हो गई। उपसभापति ने बार-बार यह कहा कि वे प्रक्रिया के अनुसार सभा को अनियत तिथि के लिए स्थगित करेंगे। इसके पश्चात् राष्ट्रगान (वन्दे मातरम्) की धुन बजाई गई और उपसभापति ने मध्याह्न पश्चात् 12 बजकर 17 मिनट पर सभा को अनियत तिथि के लिए स्थगित कर दिया।

177वां सत्र, जोकि ग्यारहवीं लोक सभा के गठन के पश्चात् पहला सत्र था, 24 मई, 1996 को आरंभ हुआ तथा 31 मई, 1996 को समाप्त होना था किंतु, 29 मई, 1996 को प्रधान मंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी तथा उनकी मंत्रि-परिषद् के त्याग-पत्र के कारण सभा 30 मई, 1996 को अनियत तिथि के लिए स्थगित कर दी गई।

186वें सत्र का दूसरा भाग जिसकी बैठक 12 अप्रैल, 1999 को बुलाई गई थी मूल रूप से 14 मई, 1999 को समाप्त होना था। श्री अटल बिहारी वाजपेयी के नेतृत्व वाली सरकार द्वारा 17 अप्रैल, 1999 को लोक सभा में विश्वास मत में हार जाने के कारण सत्र तय कार्यक्रम से पहले अर्थात् 23 अप्रैल, 1999 को समाप्त हो गया।

192वें सत्र का दूसरा भाग, जिसकी बैठक 16 अप्रैल, 2001 को बुलाई गई थी, मूल रूप से 11 मई, 2001 को समाप्त होना था। तथापि, तहलका टेपों में किये गए प्रकटनों के कारण सभा में निरंतर व्यवधान के कारण सभा 27 अप्रैल, 2001 को अनियत तारीख के लिए स्थगित कर दी गई।

194वां सत्र, जो 19 नवम्बर, 2001 को आरंभ हुआ था, बैठकों की अस्थायी सारणी के अनुसार 21 दिसम्बर, 2001 को समाप्त होना था। 13 दिसंबर, 2001 को संसद् पर आतंकवादी हमले के पश्चात् सभा ने हमले के कारण उत्पन्न स्थिति पर चर्चा की तथा 19 दिसंबर, 2001 को अनियत तारीख के लिए स्थगित हुई।

196वां सत्र, जो 15 जुलाई, 2002 को आरंभ हुआ, बैठकों की अस्थायी सारणी के अनुसार 14 अगस्त, 2002 को समाप्त होना था। तथापि, पेट्रोल पम्पों के आवंटन में अनियमितताओं के मुद्दे पर पांच लगातार दिनों के लिए सभा में निरंतर व्यवधान के कारण सभा 12 अगस्त, 2002 को अनियत तिथि के लिए स्थगित कर दी गई।

सत्रावसान और इसके प्रभाव

''सत्रावसान का अर्थ सत्र की समाप्ति है, संसद् की नहीं।''[53] सत्रावसान के द्वारा सत्र की समाप्ति होती है; स्थगन किसी सत्र के दौरान कार्यवाही का रुक जाना है।[54] कोई सत्र केवल सत्रावसान द्वारा, न कि स्थगन द्वारा, समाप्त होता है।[55] सभा के सत्रावसान और नए सत्र के रूप में उसके पुन: समवेत होने के बीच की अवधि को 'अंत:सत्रावधि' या 'सत्रावकाश' कहा जाता है। सभा का सत्र उस ''सत्रावसान आदेश'' नामक आदेश के द्वारा समाप्त होता है जो संविधान के अनुच्छेद 85(2) के अधीन राष्ट्रपति द्वारा किया जाता है। सामान्यत: सभा को अनियत दिन के लिए स्थगित करने के बाद सत्रावसान होता है।

संसदीय कार्य मंत्रालय सभा का सत्रावसान करने के लिए संसदीय कार्य संबंधी मंत्रि-मंडल समिति की स्वीकृति प्राप्त करके महासचिव को सरकार के निर्णय की सूचना देता है।[56] इस संसूचना के आधार पर महासचिव द्वारा हस्ताक्षरित एक टिप्पण राष्ट्रपति के सचिव को भेजा जाता है जिसके साथ राष्ट्रपति के अनुमोदन और हस्ताक्षर के लिए एक सत्रावसान आदेश भी संलग्न होता है। सत्रावसान आदेश निम्नलिखित रूप में होता है:

संविधान के अनुच्छेद 85 के खंड (2) के उपखंड (क) के द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए मैं एतद्द्वारा राज्य सभा का सत्रावसान करता हूं।

... (तारीख) 20... राष्ट्रपति[57]

राष्ट्रपति द्वारा यथा हस्ताक्षरित आदेश प्राप्त होने पर उसे उसी दिन महासचिव के हस्ताक्षर सहित भारत के असाधारण राजपत्र में एक अधिसूचना के रूप में प्रकाशित कर दिया जाता है। सत्रावसान के बारे में सदस्यों को राज्य सभा संसदीय समाचार द्वारा, जनसाधारण को एक प्रेस विज्ञप्ति द्वारा और संचार माध्यमों तथा भारत के मंत्रालयों आदि को एक परिपत्र द्वारा सूचित किया जाता है।

सभा के अनियत तारीख के लिए स्थगन और उसके सत्रावसान के बीच की अवधि 2 से 10 दिनों तक की होती है। यद्यपि ऐसे उदाहरण हैं जब राज्य सभा का सत्रावसान उसके अनियत तारीख के लिए स्थगित होने के दिन या अगले दिन कर दिया गया था। ऐसे भी उदाहरण हैं जब सभा को अनियत तारीख के लिए स्थगित करने और उसके सत्रावसान के बीच की अवधि कुछ लम्बी थी।

यह आवश्यक नहीं है कि दोनों सदनों का एक साथ सत्रावसान किया जाए।[58]

राज्य सभा का 170वां सत्र 21 फरवरी, 1994 को आरंभ हुआ था और वह 18 अप्रैल, 1994 को पुन: समवेत होने के लिए 18 मार्च, 1994 को स्थगित हुआ; वह 13 जून, 1994 को पुन: समवेत होने के लिए

13 मई, 1994 को पुन: स्थगित हुआ। लोक सभा भी इसी प्रकार स्थगित हुई। तथापि, 24 मई, 1994 को लोक सभा का सत्रावसान कर दिया गया[59] किन्तु राज्य सभा का सत्र ''चलता रहा''।

सत्रावसान पर सभा का सत्र समाप्त हो जाता है। सत्रावसान से सभा के समक्ष लम्बित विभिन्न प्रकार के कार्यों पर निम्नलिखित रूप से प्रभाव पड़ता है:

(क) विधेयक

संविधान के अनुच्छेद 107(3) में स्पष्ट उपबंध है कि संसद् में लम्बित कोई विधेयक सदनों के सत्रावसान के कारण व्यपगत नहीं होगा। यह व्यावृति सदन/सदनों की प्रवर समिति या संयुक्त समिति के समक्ष लम्बित विधेयकों पर भी लागू होती है।[60] सत्रावसान होने पर किसी विधेयक को पुर:स्थापित करने की अनुमति के लिए प्रस्ताव रखने के इरादे की सूचनाएं भी व्यपगत नहीं होतीं और सिवाय उस स्थिति के जब किसी विधेयक के संबंध में संविधान के अधीन प्रदान की गई मंजूरी या सिफारिश प्रभावी न रह गई हो, उक्त प्रयोजन के लिए अगले सत्र में किसी नई सूचना (नोटिस) की आवश्यकता नहीं होती।[61]

(ख) प्रस्ताव तथा संकल्प

जैसाकि ऊपर उल्लेख किया गया है, सत्रावसान होने पर विधेयकों को पुर:स्थापित करने से संबंधित सूचनाओं के अतिरिक्त सभी लम्बित सूचनाएं व्यपगत हो जाती हैं और उनके लिए अगले सत्र में नई सूचनाएं देना आवश्यक है।[62] इसके अंतर्गत प्रस्ताव, ध्यानाकर्षण, संकल्प, संशोधन आदि आते हैं। जो प्रस्ताव और संकल्प सत्र में उपस्थित किए जाते हैं और सत्र के दौरान जिनका निपटान नहीं होता वे भी सत्रावसान के बाद व्यपगत हो जाते हैं और उस स्थिति को छोड़कर उन पर अगले सत्र में आगे चर्चा नहीं हो सकती जब तक कि उसके लिए एक विनिर्दिष्ट प्रस्ताव लाया और स्वीकृत न किया जाए या इस संबंध में सभा की आम सहमति न हो जाए।[63]

30 अप्रैल, 1954, 10 दिसम्बर, 1954 और 6 मई, 1994 को विचाराधीन गैर-सरकारी सदस्यों के संकल्पों पर वाद-विवाद को स्थगित करने और अगले सत्र में इसके लिए नियत दिन को पहली मद के रूप में उन पर विचार करने के लिए प्रस्ताव उपस्थित किए गए और सभा उन पर सहमत हुई। तद्नुसार 30 अप्रैल, 1954 का संकल्प संबंधी वाद-विवाद 27 अगस्त, 1954 (सातवां सत्र) को और 10 दिसम्बर, 1954 का संकल्प संबंधी वाद-विवाद 4 मार्च, 1955 (नौवां सत्र) को पुन: आरंभ किया गया। जहां तक 6 मई, 1994 के संकल्प का संबंध था, 5 अगस्त, 1994 (171वां सत्र) को सभा में आम सहमति हुई कि उस पर आगे वाद-विवाद को स्थगित करके उसे उसी सत्र में गैर-सरकारी सदस्यों के संकल्प के लिए नियत किए गए अगले दिन अर्थात् 19 अगस्त, 1994 को दिवस की पहली मद के रूप में विचारार्थ लिया जाए। 19 अगस्त, 1994 को भी संकल्प पर आगे चर्चा समाप्त नहीं हुई और सभा की आम सहमति से सभापीठ द्वारा इस संबंध में एक घोषणा किए जाने पर संकल्प संबंधी चर्चा को अगले सत्र (172वां सत्र) के लिए जारी रखा गया। किन्तु 172वें सत्र में संकल्प पर चर्चा नहीं हो सकी क्योंकि 16 दिसम्बर, 1994 को सभा अचानक स्थगित हो गई। कार्य मंत्रणा समिति की सिफारिश पर संकल्प पर आगे चर्चा 24 मार्च, 1995 (173वां सत्र) को शुरू हुई और उसी दिन समाप्त हुई।[64]

25 अगस्त, 1995 को सदन ने आम राय से यह निर्णय किया कि नई दूरसंचार नीति के संबंध में गैर-सरकारी सदस्यों के संकल्प पर चर्चा इस प्रयोजन के लिए आगामी सत्र(175वां सत्र) में नियत किए गए अगले दिन जारी रहनी चाहिए।[65]

7 सितम्बर, 1970 को अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति के आयुक्त के प्रतिवेदनों संबंधी सरकारी प्रस्ताव पर आगे चर्चा अगले सत्र के पहले दिन आरंभ करने के लिए स्थगित कर दी गई थी।[66] तद्नुसार उस पर 9 नवम्बर, 1970 (74वां सत्र) को चर्चा पुन: आरंभ हुई।

7 अप्रैल, 1971 को एक प्रस्ताव उपस्थित किए जाने पर राष्ट्रपति के अभिभाषण के दौरान कुछ सदस्यों के आचरण का निरनुमोदन करने वाले प्रस्ताव से संबंधित चर्चा को अगले सत्र के लिए स्थगित कर दिया गया। (किन्तु उसके बाद के सत्र में यह चर्चा पुन: आरंभ नहीं हुई)।[67]

1 दिसम्बर, 1988 को कार्मिक, लोक शिकायत तथा पेंशन मंत्रालय में तथा गृह मंत्रालय में राज्य मंत्री ने संघ लोक सेवा आयोग के कतिपय प्रतिवेदनों पर विचार किये जाने के लिए एक प्रस्ताव उपस्थित किया। चर्चा समाप्त नहीं हुई। अगले सत्र (149वां सत्र) में उस पर चर्चा पुन: आरंभ हुई यद्यपि इस संबंध में कोई प्रस्ताव नहीं रखा गया था।[68]

(ग) संसदीय समितियों के समक्ष लम्बित कार्य

प्रक्रिया के नियमों में विशेष रूप से यह उपबंध है कि किसी समिति के समक्ष लम्बित कोई कार्य केवल सभा के सत्रावसान के कारण व्यपगत नहीं होगा और इस प्रकार सत्रावसान होने पर भी समिति कार्य करती रहेगी।[69]

संसद् के किसी सदन का सत्रावसान होने पर राष्ट्रपति के पास अनुच्छेद 123 के अधीन अध्यादेश जारी करने की शक्ति है। यदि सत्रावसान के आदेश के पूर्व कोई अध्यादेश जारी किया जाता है और अधिसूचित किया जाता है तो वह शून्य होगा।[70]

राज्य सभा के कार्य पर लोक सभा के भंग होने का प्रभाव

संविधान के अधीन केवल लोक सभा भंग होती है। इसके विपरीत राज्य सभा भंग नहीं होती।[71] लोक सभा के भंग होने पर उसके समक्ष लम्बित सभी कार्य व्यपगत हो जाते हैं। किन्तु लोक सभा के भंग होने से एक सीमा तक राज्य सभा के समक्ष लम्बित कार्य पर भी प्रभाव पड़ता है जैसाकि नीचे दर्शाया गया है:

(क) विधायी कार्य

अनुच्छेद 107(4) में उपबंध है कि राज्य सभा में लम्बित कोई विधेयक, जिसे लोक सभा द्वारा पारित नहीं किया गया है, लोक सभा के भंग होने पर व्यपगत नहीं होगा। किन्तु यदि अनुच्छेद 107(5) के अधीन कोई विधेयक, जो लोक सभा में लम्बित है या लोक सभा द्वारा पारित किया गया है और राज्य सभा में लम्बित है तो वह लोक सभा के भंग होने पर व्यपगत हो जाता है। अनुच्छेद 108(5) के अधीन किसी विधेयक पर गतिरोध दूर करने के लिए सदनों को संयुक्त बैठक में समवेत होने के लिए आहूत करने के अपने आशय की राष्ट्रपति की अधिसूचना के पश्चात् बीच में लोक सभा के भंग हो जाने पर भी संयुक्त बैठक हो सकेगी और उसमें विधेयक पारित हो सकेगा। अत: इन उपबंधों का प्रभाव इस प्रकार है:

(i) राज्य सभा में आरंभ होने वाले ऐसे विधेयक जो उस सदन में अभी लंबित हैं और लोक सभा के भंग होने पर व्यपगत नहीं होते।

(ii) राज्य सभा में आरंभ होने वाले ऐसे विधेयक जो उस सदन में पारित किए गए हैं लोक सभा को भेजे गए हैं और वहां लंबित हैं, लोक सभा के भंग होने पर व्यपगत हो जाते हैं।

इस श्रेणी के अंतर्गत व्यपगत हुए विधेयकों की संख्या इस प्रकार रही है: पहली लोक सभा के दो, दूसरी लोक सभा का एक, तीसरी लोक सभा के छह, चौथी लोक सभा के तेरह, पांचवीं लोक सभा के तीन, छठी लोक सभा के चार, सातवीं और आठवीं लोक सभा के छह-छह, नौवीं लोक सभा के चार, दसवीं लोक सभा का एक, ग्यारहवीं लोक सभा का एक, बारहवीं लोक सभा के पांच और तेरहवीं लोक सभा के तीन।

(iii) लोक सभा में आरंभ हुए ऐसे विधेयक जो उस सभा द्वारा पारित किए जाते हैं और राज्य सभा को भेज दिए जाते हैं और लोक सभा के भंग होने की तारीख को भी वहां लंबित रहते हैं, व्यपगत हो जाते हैं।

इस श्रेणी के अंतर्गत व्यपगत हुए विधेयकों की संख्या इस प्रकार है: दूसरी और चौथी लोक सभा के दो-दो, छठी लोक सभा के चार, सातवीं लोक सभा का एक, आठवीं और दसवीं लोक सभा के चार-चार, ग्यारहवीं लोक सभा का एक और बारहवीं लोक सभा के चार।

(iv) राज्य सभा में आरंभ हुए ऐसे विधेयक जो लोक सभा द्वारा संशोधनों सहित उस सदन को लौटा दिए जाते हैं और उसके भंग होने की तारीख को भी वहां लंबित रहते हैं, व्यपगत हो जाते हैं।

वास्तुविद् विधेयक, 1968 राज्य सभा द्वारा 7 मई, 1970 को पारित किया गया था। लोक सभा ने 3 दिसम्बर, 1970 को विधेयक को संशोधनों सहित राज्य सभा को लौटाया। यथासंशोधित विधेयक 27 दिसम्बर, 1970 को लोक सभा के भंग किए जाने तक लंबित रहा। इस प्रकार विधेयक व्यपगत हो गया।

(v) कोई ऐसा विधेयक जिस पर सदनों की सहमति नहीं हुई है और जिस पर विचार करने के लिए सदनों की एक संयुक्त बैठक आहूत करने के लिए राष्ट्रपति ने लोक सभा के भंग होने के पूर्व अपने इरादे को अधिसूचित कर दिया है, लोक सभा के भंग होने पर व्यपगत नहीं होता।[72]

(vi) कोई ऐसा विधेयक जिसे संसद् के दोनों सदनों ने पारित कर दिया हो और जिसे अनुमति के लिए राष्ट्रपति के पास भेज दिया गया हो, लोक सभा के भंग होने पर व्यपगत नहीं होता।

राष्ट्रपति के समक्ष अनुमति के लिए लंबित विधेयक पर लोक सभा के भंग होने के कारण पड़ने वाले प्रभाव के बारे में संविधान में कोई स्पष्ट उपबंध नहीं हैं। पुरुषोत्तम नाम्बियार **बनाम** केरल राज्य[73] के मामले में यह माना गया कि राज्यपाल या राष्ट्रपति की अनुमति के लिए लंबित कोई विधेयक अनुच्छेद 196 के खंड (5) की परिधि के बाहर है और यह नहीं कहा जा सकता कि वह विधान सभा के भंग होने पर व्यपगत हो जाएगा।[74]

लोक सभा द्वारा यथापारित संसद्-सदस्य वेतन, भत्ता और पेंशन (संशोधन) विधेयक, 1991 राज्य सभा द्वारा 13 मार्च, 1991 को पारित किया गया था। उसी दिन नौवीं लोक सभा भंग कर दी गई। 18 मार्च, 1991 को राज्य सभा सचिवालय ने विधेयक को राष्ट्रपति के समक्ष अनुमति के लिए प्रस्तुत किया। 6 मार्च, 1992 को राष्ट्रपति ने विधेयक पर अनुमति रोक ली और 9 मार्च, 1992 को राज्य सभा को तद्नुसार सूचित किया गया।[75]

(vii) यदि राष्ट्रपति द्वारा सदनों के पुनर्विचार के लिए कोई विधेयक राज्य सभा को लौटाया जाता है और उस विधेयक पर सदनों द्वारा पुनर्विचार होने के बिना ही लोक सभा भंग हो जाती है तो वह व्यपगत नहीं होता।

भारतीय डाक घर (संशोधन) विधेयक, 1986 जिस रूप में उसे संसद् के सदनों ने पारित किया था, 19 दिसम्बर, 1986 को राष्ट्रपति के समक्ष उनकी अनुमति के लिए प्रस्तुत किया गया। 28 नवम्बर, 1989 को आठवीं लोक सभा के भंग होने तक विधेयक उनके समक्ष लंबित रहा। राष्ट्रपति ने विधेयक को सदनों द्वारा पुनर्विचार किए जाने के लिए 7 जनवरी, 1990 को राज्य सभा को लौटाया। 13 मार्च, 1991 को नौवीं लोक सभा भंग हो गई; दसवीं लोक सभा भी 15 मई, 1996 को भंग हो गई। विधेयक सदनों द्वारा पुनर्विचार किए जाने के लिए अब भी राज्य सभा में विद्यमान है।[76]

(ख) दोनों सदनों की संयुक्त समितियों के समक्ष लंबित कार्य

(1) विधेयकों संबंधी संयुक्त समितियां

लोक सभा के भंग होने पर उस सभा द्वारा प्रारंभ की गई दोनों सदनों के सदस्यों से मिलकर बनी संयुक्त समिति भी भंग हो जाती है और इस प्रकार ऐसी संयुक्त समिति में कार्य कर रहे राज्य सभा के सदस्य लोक सभा के सदस्यों के सहित उस समिति के सदस्य नहीं रहते। इसी प्रकार राज्य सभा द्वारा प्रारंभ की गई और दोनों सदनों के सदस्यों से मिलकर बनी संयुक्त समिति में कार्य कर रहे लोक सभा के सदस्य (राज्य सभा

के सदस्यों सहित) लोक सभा के भंग होने पर समिति के सदस्य नहीं रहते। दोनों ही मामलों में संयुक्त समिति की कोई हैसियत नहीं रहती और वह निष्क्रिय हो जाती है। राज्य सभा द्वारा निम्नलिखित विधेयकों के संबंध में प्रारंभ की गई संयुक्त समितियां लोक सभा के भंग होने पर निष्क्रिय हो गईं थीं:

(i) धार्मिक न्यास विधेयक, 1960; (ii) संविधान (बत्तीसवां संशोधन) विधेयक, 1973; (iii) बहु-राज्य सहकारी सोसाइटी विधेयक, 1977; (iv) खादी और ग्रामोद्योग आयोग (संशोधन) विधेयक, 1978; (v) अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति आदेश (संशोधन) विधेयक, 1978; (vi) प्रसार भारती (भारतीय प्रसारण निगम) विधेयक, 1979; (vii) पोत परिवहन अभिकर्ता (अनुज्ञापन) विधेयक, 1988; (viii) लोक प्रतिनिधित्व (संशोधन) विधेयक, 1990; और (ix) अर्जित प्रतिरक्षण न्यूनतम संलक्षण (एड्स) निवारण विधेयक, 1990।

जब लोक सभा के भंग होने के कारण कतिपय विधेयकों संबंधी पिछली संयुक्त समितियां निष्क्रिय हो गईं तो उन्हीं विधेयकों के संबंध में निम्नलिखित संयुक्त समितियां पुन: गठित की गईं:

(1) विदेशी विवाह विधेयक, 1963 संबंधी संयुक्त समिति;[77] (2) मोटर यान (संशोधन) विधेयक, 1965 संबंधी संयुक्त समिति;[78] (3) जल प्रदूषण निवारण विधेयक, 1969 संबंधी संयुक्त समिति;[79] (4) दंड प्रक्रिया संहिता विधेयक, 1970 संबंधी संयुक्त समिति;[80] (5) विश्व भारती (संशोधन) विधेयक, 1978 संबंधी संयुक्त समिति; और (6) मानसिक स्वास्थ्य विधेयक, 1981 संबंधी संयुक्त समिति।

23 मार्च, 1978 को राज्य सभा में पुर:स्थापित किए गए विश्व भारती (संशोधन) विधेयक, 1978 को एक प्रस्ताव द्वारा 25 जुलाई, 1978 को संसद् के सदनों की संयुक्त समिति को सौंपा गया था। 31 अगस्त, 1978 को लोक सभा इस प्रस्ताव पर सहमत हुई। इसके पहले कि संयुक्त समिति कार्य को पूरा करके प्रतिवेदन प्रस्तुत करे, लोक सभा 22 अगस्त, 1979 को भंग हो गई। 21 जनवरी, 1980 को नई लोक सभा गठित हुई। जब 17 जून, 1980 को शिक्षा मंत्री ने राज्य सभा में इस विधेयक को एक नई संयुक्त समिति को नए सिरे से सौंपने का प्रस्ताव उपस्थित करना चाहा तब प्रस्ताव के रूप पर आपत्ति करते हुए एक औचित्य का प्रश्न उठाया गया। यह तर्क दिया गया कि चूंकि राज्य सभा ने ही पिछली बार इस संयुक्त समिति की स्थापना की थी इसलिए लोक सभा के भंग होने के कारण तत्कालीन समिति के अस्तित्व पर प्रभाव नहीं पड़ा। केवल लोक सभा के सदस्यों के स्थान रिक्त हुए और यह मानकर कि संयुक्त समिति अस्तित्व में है, इन रिक्तियों को भरा जाना चाहिए। संयुक्त समितियों को निष्क्रिय मानने वाले पिछले निर्णयों को सुधारा जाना चाहिए। 1 जुलाई, 1980 को इस संबंध में सभापति ने जो निर्णय दिया उसमें, अन्य बातों के साथ-साथ यह कहा गया था:

> मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि ऐसे विधेयक को जो संयुक्त समिति को सौंप दिया गया हो, लोक सभा के भंग होने के बाद संयुक्त समिति को नए सिरे से सौंपने का प्रस्ताव उपस्थित करने की प्रथा बद्धमूल हो चुकी है और जब तक किसी निश्चित नियम द्वारा पूर्व निर्णय निष्प्रभावी नहीं होते तब तक हमें इस प्रथा का अनुसरण करना चाहिए... चूंकि मामला अनिर्णीत नहीं है और पूर्व निर्णयों के अंतर्गत आता है इसलिए मेरा निर्णय है कि वर्तमान मामले में भी इन पूर्वनिर्णयों का, जो स्पष्ट हैं, अनुसरण किया जाना चाहिए।[81]

विधि तथा न्याय मंत्रालय से इस मामले में राय ली गई थी और उसका भी यह मत था कि पूर्वनिर्णयों का अनुसरण किया जाना चाहिए।[82] मानसिक स्वास्थ्य विधेयक, 1981 संबंधी संयुक्त समिति के संबंध में भी इसी प्रक्रिया का अनुसरण किया गया।[83]

(2) सांविधिक संयुक्त समितियां

राजभाषा समिति दोनों सदनों के सदस्यों से मिलकर बनती है और इस समिति में कार्य करने के लिए चुने गए राज्य सभा सदस्य लोक सभा के भंग होने पर भी समिति में बने रहते हैं। लोक सभा के भंग होने पर केवल लोक सभा के सदस्य समिति के सदस्य नहीं रहते। इस स्थिति का कारण यह है कि राजभाषा समिति को संसद् के एक अधिनियम द्वारा प्राधिकार प्राप्त है और उस समिति के सदस्यों का कार्यकाल सदन के

सदस्यों के रूप में उनके कार्यकाल तक ही रहता है।[84] जैसाकि विधि तथा न्याय मंत्रालय द्वारा मत व्यक्त किया गया है, ''इस आधार पर इसमें भेद करना संभव है कि यह एक सांविधिक समिति है और चूंकि राज्य सभा द्वारा उसके सदस्य निर्वाचित किए जाते हैं इसलिए लोक सभा के भंग होने पर भी वे उसके सदस्य बने रहते हैं और लोक सभा के सदस्यों के उपस्थित न रहने पर भी समिति कार्य करती रह सकती है परंतु उसमें आवश्यक गणपूर्ति रहनी चाहिए।''[85]

(3) तदर्थ समितियां

लोक सभा के भंग होने पर संसद् की तदर्थ समिति भी निष्क्रिय हो जाती है।

एक ध्यानाकर्षण प्रस्ताव पर चर्चा के परिणामस्वरूप 29 अक्तूबर, 1996 को देश में वक्फ बोर्डों के कार्यकरण के संबंध में सभा की एक समिति[86] गठित की गई। बाद में इस समिति को एक संयुक्त समिति में परिवर्तित कर दिया गया जिसमें लोक सभा के सदस्य भी सम्मिलित थे। 4 दिसंबर, 1997 को ग्यारहवीं लोक सभा के भंग होने के कारण उक्त संयुक्त समिति भंग हो गई। कुछ सदस्यों के अनुरोध पर 28 जनवरी, 1999 को उक्त समिति का पुनर्गठन किया गया। 26 अप्रैल, 1999 को बारहवीं लोक सभा के भंग होने के कारण उक्त समिति पुनः भंग हो गई। तेरहवीं लोक सभा के गठन के पश्चात् 27 मई, 2000 को उक्त समिति का पुनर्गठन किया गया। 6 फरवरी, 2004 को तेरहवीं लोक सभा के भंग होने के साथ ही उक्त समिति पुनः भंग हो गई। 17 मई, 2004 को चौदहवीं लोक सभा के गठन के पश्चात् 2 जनवरी, 2006 को उक्त समिति का पुनर्गठन किया गया।

टिप्पणियां और संदर्भ

1. अनुच्छेद 83(1)
2. अनुच्छेद 83(2)
3. अनुच्छेद 85(1)
4. अनुच्छेद 85(2)
5. राज्य सभा में इसके लिए सामान्य शब्द ''अंतःसत्रावधि'' या ''सत्रावकाश'' है
6. मे, पृष्ठ 220
7. 1962 और 1990 के अन्तिम सत्रों की अवधि क्रमशः जनवरी, 1963 और जनवरी, 1991 तक बढ़ी
8. नियम 272
9. अनुच्छेद 77(3)
10. संसदीय कार्य मंत्रालय का वार्षिक प्रतिवेदन, 1993-94 (अंग्रेजी), पृष्ठ 3
11. 36वें (1961), 52वें (1965)और 103वें (1977) सत्रों के आह्वान आदेशों पर उपराष्ट्रपति ने राष्ट्रपति के कृत्यों का निर्वहन करते हुए हस्ताक्षर किए थे; 69वें (1969), 99वें (1977), 100वें (1977) 101वें (1977) और 102वें (1977) सत्रों के आह्वान आदेशों पर उपराष्ट्रपति ने राष्ट्रपति के रूप में कार्य करते हुए हस्ताक्षर किए थे
12. फा॰ सं॰ 1/4/55-एल
13. नियम 3(2)
14. राज्य सभा वाद-विवाद, 24.8.1953, कालम 72–93

15. फा॰सं॰ 1/5/62-एल
16. फा॰सं॰ 1/1/65-एल
17. फा॰सं॰ 1/1/67-एल
18. फा॰सं॰ 1/2/75-एल
19. फा॰सं॰ 1/3/77-एल
20. राज्य सभा वाद-विवाद, 14.6.1962, कालम 1-2
21. अनुच्छेद 85(1)
22. फा॰सं॰ 40/9/67-एल; और राज्य सभा वाद-विवाद, 10.12.1968, कालम 3333-34
23. राज्य सभा वाद-विवाद, 26.11.1962, कालम 2364-65
24. नियम 3(1)
25. जब उपराष्ट्रपति द्वारा राष्ट्रपति के कृत्यों का निर्वहन करते हुए या राष्ट्रपति के रूप में कार्य करते हुए आह्वान आदेश पर हस्ताक्षर किए जाते हैं तो आह्वान में आवश्यक परिवर्तन कर दिया जाता है
26. राज्य सभा वाद-विवाद, 15.12.1969, कालम 4172-73
27. फा॰सं॰ 1/4/69-एल
28. फा॰सं॰ 1/3/75-एल, 1/4/75-एल, 1/1/76-एल, 1/2/76-एल, 1/3/76-एल, 1/4/76-एल, 1/1/77-एल, 1/1/79-एल, 1/3/81-एल, 1/3/82-एल, 1/1/84-एल, 1/2/84-एल, 1/1/85-एल और 1/2/85-एल
29. फा॰सं॰ 1/3/89-एल
30. फा॰सं॰ 1/1/90-एल
31. फा॰सं॰ 1/3/90-एल

31क. फा॰सं॰ 1/3/2003-एल

32. लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 27
33. फा॰सं॰ 1/1/94-एल
34. फा॰सं॰ 1/1/2000-एल

34क. फा॰सं॰ 1/1/2002-एल

35. फा॰सं॰ 1/1/71-एल
36. फा॰सं॰ 1/2/54-एल
37. फा॰सं॰ 1/4/60-एल
38. फा॰सं॰ 1/3/72-एल
39. फा॰सं॰ 1/3/78-एल
40. फा॰सं॰ 1/3/79-एल
41. फा॰सं॰ 1/3/81-एल
42. फा॰सं॰ 1/1/83-एल
43. फा॰सं॰ 1/1/90-एल
44. फा॰सं॰ 1/1/92-एल
45. फा॰सं॰ 1/4/82-एल; साथ ही संसदीय समाचार (2), 29.9.1982 **देखिये**
46. फा॰सं॰ 1/3/57-एल

47. फा॰सं॰ 1/3/65-एल
48. फा॰सं॰ 1/3/68-एल और 35/1/68-एल
49. फा॰सं॰ 24/74-टी, 1/1/76-एल और 1/1/77-एल
50. फा॰सं॰ 24/81-टी
51. फा॰सं॰ 15/90-टी और 1/3/91-एल
52. फा॰सं॰ 10/91-टी, 1/4/91-एल और 1/5/91-एल
53. इल्बर्ट सी॰, 'पार्लियामेंट, इट्स हिस्ट्री, कान्स्टीट्यूशन एंड प्रेक्टिस', तीसरा संस्करण, लंदन, आक्सफोर्ड, 1950
54. मे, पृष्ठ 221
55. एच॰ सिद्धवीरप्पा तथा अन्य **बनाम** मैसूर राज्य, ए॰आई॰आर॰ 1971, मैसूर 200
56. संसदीय कार्य मंत्रालय का वार्षिक प्रतिवेदन, 1993-94 (अंग्रेजी), पृष्ठ 3-4
57. 35वें और 36वें सत्रों (1961) और 51वें सत्र (1965) संबंधी सत्रावसान आदेशों पर उपराष्ट्रपति ने राष्ट्रपति के कृत्यों का निर्वहन करते हुए हस्ताक्षर किए थे । 68वें सत्र (1969), 99वें, 100वें और 101वें सत्रों (1977) संबंधी सत्रावसान आदेशों पर उपराष्ट्रपति ने राष्ट्रपति के रूप में कार्य करते हुए हस्ताक्षर किए थे
58. अनुच्छेद 85(2)(क)
59. लोक सभा संसदीय समाचार (2), 24.5.1994
60. नियम 226
61. -वही-
62. -वही-
63. नियम 28(1)
64. राज्य सभा वाद-विवाद, 30.4.1954, कालम 4776; 27.8.1954, कालम 602; 10.12.1954, कालम 1486; 4.3.1955, कालम 1154; 6.5.1994, 5.8.1994, 19.8.1994, 24.3.1995; और कार्य मंत्रणा समिति के कार्यवृत्त, 23.3.1995
65. राज्य सभा वाद-विवाद 25.8.1995
66. -वही- 7.9.1970, कालम 134
67. -वही- 7.4.1971, कालम 209
68. -वही- 1.12.1988, कालम 358–78 और 3.4.1989, कालम 129–70
69. नियम 226
70. विद्या चौधरी **बनाम** बिहार प्रांत, ए॰ आई॰आर॰ 1950, पटना 19
71. अनुच्छेद 83(1)
72. अनुच्छेद 108(5)
73. ए॰ आई॰आर॰ 1962, एस॰ सी॰ 694
74. विधि तथा न्याय मंत्रालय का मत फा॰ सं॰ 1/51/86-बी
75. राज्य सभा वाद-विवाद, 9.3.1992, कालम 277 और फा॰ सं॰ 1/31/91-बी
76. विधि तथा न्याय मंत्रालय का मत
77. राज्य सभा वाद-विवाद, 13.5.1968, कालम 2777–81

78. राज्य सभा वाद-विवाद, 13.2.1968, कालम 165-66
79. -वही- 30.7.1971, कालम 298–300
80. -वही- 31.3.1971, कालम 174-76
81. -वही- 1.7.1980, कालम 123-24
82. फा॰ सं॰ 1/11/78-बी
83. राज्य सभा वाद-विवाद, 22.3.1985, कालम 191-92
84. राजभाषा अधिनियम, 1963, धारा 4
85. विधि तथा न्याय मंत्रालय का मत, पूर्वोक्त में
86. संसदीय समाचार (2), 31.10.1996; 28.1.1999 और 29.5.2000